

SAMVARDHINI :- 30/07/2024

Volume – 6

Issue – 1

(ISSN ONLINE:- 2583-7176)

<https://samvardhini.in>

Author :-

डॉ वीरेंद्र कुमार पाठक

शिक्षा निदेशालय, दिल्ली

Email : - drvpathakdoe@gmail.com

भारतीय ज्ञान प्रणालियों (IKS) के संदर्भ में प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE)

शोधसार

लेखक
डॉ वीरेंद्र कुमार

यह अध्ययन भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) में प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के विकास का अध्ययन करता है, जो परंपरागत भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) में निहित बालक के समग्र विकास के दृष्टिकोण पर बल देता है। यह अध्ययन यह परीक्षण करता है कि वैदिक, जैन और बौद्ध दर्शनों से प्राप्त हुई प्राचीन शैक्षिक प्रथाओं/अभ्यासों ने बालकों के शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक विकास का किस प्रकार पोषण किया है। वैदिक अनुष्ठान, गुरुकुल प्रणाली, आयुर्वेद और अहिंसा एवं सचेतनता (Mindfulness) के सिद्धांतों ने बालक के संज्ञानात्मक और नैतिक विकास को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। प्रारंभिक शिक्षा में संस्कृत सीखने, कहानी सुनाने, उत्सवों और खेलों के एकीकरण ने स्मृति, भावनात्मक लचीलापन (रिजिलिएंस) और सामाजिक तदानुभूति का विकास किया है। प्रस्तुत अध्ययन औपनिवेशिक शासन के मध्य पारंपरिक भारतीय शिक्षा के विघटन और राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 के माध्यम से स्वतंत्रता के बाद के सुधारों में भारतीय ज्ञान प्रणालियों द्वारा पुनरुद्धार पर विमर्श करता है। आधुनिक ईसीसीई की संरचना में परंपरागत प्रथाओं/अभ्यासों को सम्मिलित करके, एनईपी 2020, एक जटिल विश्व में सर्वगुण संपन्न व्यक्तित्वों के विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से प्राचीन भारतीय शिक्षा की मेधा द्वारा समकालीन वैश्विक मानकों के अनुरूप व्यवस्थित करने का मार्ग प्रशस्त करता है।

कूट पद :-

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई), भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ (आईकेएस), गुरुकुल-प्रणाली, समग्र शिक्षा, बहुभाषावाद (Multilingualism), अनुभवात्मक शिक्षा (Experiential Learning).

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) जन्म से आठ वर्ष की अवधि को सम्मिलित करते हुए मस्तिष्क विकास के लिए एक महत्वपूर्ण चरण है। "गुणवत्तापूर्ण प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) अच्छे स्वास्थ्य, पोषण, सीखने की सफलता, सामाजिक-भावनात्मक विकास और भविष्य की आर्थिक उत्पादकता का आधार स्थापित करता है" – यूनेस्को। प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) का महत्व द्योतित होते हुए भी अधिकांशतः शिक्षा नीतियों और उसमें निवेश के लिए इसमें सीमित ध्यान आकर्षित हुआ है, विशेषकर वंचित समूहों के संदर्भ में। अधिकांश प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) सेवाएं निजी प्रबंधन द्वारा संचालित होती हैं, जिससे वे उतनी प्रभावी नहीं रहती हैं। प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) को सम्मिलित करने के लिए शिक्षा के अधिकारों के प्रभावी विस्तार से बच्चों के विकासात्मक परिणामों में काफी वृद्धि हो सकती है। विभिन्न साक्ष्य यह समर्थन करते हैं कि अनिवार्य पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए कानूनी प्रावधान बालकों के प्रारंभिक विकास को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) को सार्वभौमिक रूप से आजीवन सीखने और बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक माना जाता है। भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) में, ईसीसीई की एक बहुआयामी संरचना और व्यवस्था परिलक्षित होती है जो शारीरिक, संज्ञानात्मक, भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास को सार्थकता से रेखांकित करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के महत्व पर प्रकाश डालती है और आधुनिक शैक्षिक व्यवस्थाओं में आईकेएस को एकीकृत करने के लिए निर्देशित करती है। प्रस्तुत अध्ययन वेदों, उपनिषदों, जैन और बौद्ध साहित्य-शास्त्रों और आयुर्वेदिक ग्रंथों जैसे प्राचीन भारतीय ग्रंथों से प्रेरणा लेते हुए प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) के आलोक में प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के भविष्य को आकार का मार्ग प्रशस्त करता है।

1. भारतीय ज्ञान प्रणालियों के संदर्भ में प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के ऐतिहासिक एवं दार्शनिक आधार:

1.1. वैदिक शिक्षा: संपूर्ण बालक का विकास/पोषण:

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के ऐतिहासिक एवं दार्शनिक आधार भारतीय ज्ञान प्रणालियों की प्राचीन परंपराओं में निहित हैं। वैदिक, जैन और बौद्ध शिक्षाओं से प्रेरणा लेते हुए बालकों के समग्र विकास, नैतिक मूल्यों और बालक के मन और आत्मा का पोषण करने पर बल देते हैं। प्राचीन भारतीय शास्त्रों में निहित शिक्षा की वैदिक प्रणाली एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती थी, जो बुद्धि (बुद्धि), भावनाओं (मनस्) और आत्मा (आत्मन) के संतुलित विकास पर केंद्रित था, ताकि व्यक्तियों को आत्म-साक्षात्कार की ओर निर्देशित किया जा सके। यह प्रणाली, आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) सिद्धांतों के साथ निकटता के

साथ थी तथा न केवल संज्ञानात्मक विकास बल्कि भावनात्मक, शारीरिक और आध्यात्मिक विकास पर भी बल देती थी। जो अनुभवात्मक शिक्षा, चरित्र विकास और सामुदायिक जीवन को गुरुकुल-प्रणाली के माध्यम से समृद्ध करती थी। छात्रों को सत्य, धर्म, शांति और संयम जैसे मूल्यों को सिखाया जाता था, जिससे नैतिक और अनुशासित जीवन का पोषण होता था।

वैदिक विचारधारा में शिक्षा को ज्ञानोदय की एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखा जाता था, जो ब्रह्मांडीय क्रम (ऋता) से निकटता से संबंधित थी। यहां परस्पर अन्तर्सम्बन्ध पर बल दिया जाता था, कि वह समकालीन ईसीसीई के सहानुभूति, सहयोग और पर्यावरणीय प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित करने के साथ प्रतिध्वनित होता है। प्रस्तुत श्लोक इन मूल्यों को विदग्धता से परिलक्षित कर रहा है :

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ (ऋग्वेद 5.1.1) हे ईश्वर, हम दोनों (सब) की रक्षा करो, हम दोनों (सब) का पोषण करो, हम सब मिलकर संपूर्ण ऊर्जा के साथ काम करें, हमारी बुद्धि अत्यधिक तेज से युक्त हो और हम एक दूसरे से घृणा (शत्रुता) न करें।" यह ऋग्वैदिक मंत्र शिक्षा की सहकार्यता की प्रकृति को स्पष्ट करता है, परस्पर सम्मान और साझा उत्तरदायित्व पर बल देता है।

उसी प्रकार - मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव॥ (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.11.2) (माता को ईश्वर के समान सम्मान दो। अपने पिता का ईश्वर के समान आदर करो। अपने शिक्षक को ईश्वर के समान सम्मान दें। अपने अतिथि का ईश्वर के समान आदर करो।) यह उपनिषदीय वाक्य माता, पिता, अतिथि तथा शिक्षकों के प्रति सम्मान पर बल देती है, उनकी तुलना दैवीय विभूतियों से करती है।

1.1.1. आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) और वैदिक शिक्षा :

वैदिक शिक्षा के सिद्धांत कई अर्थों में समकालीन ईसीसीई के साथ निकटता से समर्थन करते हैं :

समग्र विकास: वैदिक शिक्षा की तरह, आधुनिक ईसीसीई शारीरिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक विकास का पोषण करती है। ईसीसीई में योग जैसी प्रथाएं शरीर और मस्तिष्क को संतुलित करने के उद्देश्य से प्राचीन वैदिक विधियों को प्रतिध्वनित करती हैं।

अनुभवात्मक और मूल्य-आधारित शिक्षा: गुरुकुल-प्रणाली का अनुभव-आधारित और नैतिक शिक्षा पर बल आज की ईसीसीई प्रथाओं तथा अभ्यासों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। व्यावहारिक शिक्षा, कहानी सुनाना और प्रकृति-आधारित गतिविधियाँ इस तथ्य के सशक्त उदाहरण हैं।

वैयक्तिकृत शिक्षण और शिक्षक-छात्र सम्बन्ध: वैदिक शिक्षा का व्यक्तिगत ध्यान देने की प्रणाली आधुनिक ईसीसीई के बाल-केंद्रित दृष्टिकोण से मिलता-जुलता है। जिस प्रकार आज के शिक्षक प्रत्येक बच्चे की अलग-अलग जरूरतों और विकास के स्तर के अनुसार शिक्षण योजना बनाते हैं। आंतरिक विकास और नैतिकता पर ध्यान: वैदिक शिक्षा की भांति ही आधुनिक ईसीसीई भी नैतिकता और अच्छे चरित्र पर बल देती है। दया, सहानुभूति और समाज के प्रति जिम्मेदारी सिखाना इसका मुख्य उद्देश्य है।

1.1.2. वैश्विक ईसीसीई में वैदिक विचारों के अनुप्रयोग:

वैश्विक स्तर पर प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के फ्रेमवर्क (संरचनाएं) द्रुतगति से वैदिक प्रणाली जैसे प्राचीन शिक्षा दर्शन से प्रेरणा ले रहे हैं। इसमें सचेतनता (mindfulness), ध्यान और योग जैसे अभ्यास, उपयोग में लाए जा रहे हैं ताकि भावनात्मक कल्याण और एकाग्रता को बढ़ावा दिया जा सके। ये अभ्यास वैदिक शिक्षा के आंतरिक शांति, आत्म-जागरूकता और नैतिक शिक्षा पर बल को प्रदर्शित करते हैं, जिससे अहिंसा, सहयोग और सम्मान जैसे गुणों को बढ़ावा मिलता है। वैदिक शिक्षा का समग्र दृष्टिकोण, जो शिक्षक और छात्र के बीच सद्भाव और सहयोग पर बल देता है, विश्व भर में बच्चों के संतुलित विकास के लिए अनुभवात्मक शिक्षा, नैतिक विकास और भावनात्मक कल्याण को एकीकृत करके आधुनिक ईसीसीई को प्रेरित कर रहा है।

1.2. उपनयन संस्कार: एक अनुष्ठान:

उपनयन संस्कार, वैदिक परंपरा का एक महत्वपूर्ण अनुष्ठान है, जो एक बालक के शिक्षा में औपचारिक प्रवेश का प्रतीक है, जिसके माध्यम से बालक का गुरुकुल प्रणाली में प्रवेश होता था, आज भी उपनयन संस्कार प्रतीकात्मक रूप से समाज में दृष्टिगत होता है। विद्यालय के प्रथम दिवस के समारोह या स्नातक समारोह जैसे आधुनिक व्यवस्थाओं की तरह ही इस पवित्र समारोह के माध्यम से बालकों की औपचारिक शिक्षा के लिए सज्ज होना, सीखने और अनुशासन के प्रति प्रतिबद्धता का संकेत दिया गया है। उपनयन अनुष्ठान ने गुरु (शिक्षक) और शिष्य (छात्र) के बीच एक गहरा संबंध (Bond) स्थापित किया है, क्योंकि बालक शिक्षक के साथ रहता था, प्रत्यक्ष अनुभव और अनुकरण के माध्यम से सीखता था। आत्म-अनुशासन, सादगी और ज्ञान के प्रति सम्मान जैसे मूल्यों को शीघ्रता से ही प्रदान किया जाता था, जो एक समग्र विकासात्मक दृष्टिकोण को दर्शाता है। कंधे के एक तरफ से नीचे की तरफ पार पहना जाने वाला पवित्र धागा (यज्ञोपवीत) विचार और कर्म में पवित्रता बनाए रखने के लिए बच्चे को कर्तव्य के प्रति एक निरंतर स्मरण के रूप में निर्धारित किया गया था, जबकि गायत्री मंत्र का दैनिक पाठ एकाग्रता, सचेतनता और भक्ति को बढ़ावा देता था। उपनयन ने शिक्षा को न केवल एक बौद्धिक खोज के रूप में ही नहीं अपितु आत्म-साक्षात्कार और ज्ञान की ओर एक आध्यात्मिक यात्रा के रूप में बल दिया, गुरु-शिष्य संबंध के अंदर ही ज्ञान की पवित्रता को रेखांकित किया गया है। ऋग्वेद सहित प्राचीन ग्रंथ शिक्षा के महत्व और गुरु की भूमिका को प्रकाशित करते हैं। इस तरह का एक श्लोक शिक्षा के समग्र लक्ष्य को रेखांकित करता है:

'विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम्। पात्रत्वात् धनमाप्नोति धनात् धर्मं ततः सुखम्॥' (चाणक्य नीति 1.3) (ज्ञान विनम्रता देता है, विनम्रता से योग्यता प्राप्त होती है। योग्यता से धन प्राप्त होता है और धन से धर्म प्राप्त होता है और फिर सुख प्राप्त होता है।) यह श्लोक वैदिक शिक्षा के समग्र उद्देश्य को परिभाषित करता है, यह दर्शाता है कि कैसे ज्ञान विनम्रता, योग्यता और अंततः एक पूर्ण और कर्तव्यनिष्ठ जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है। उपनयन संस्कार इस प्रकार एक छात्र की शैक्षिक यात्रा में एक आधारभूत चरण है, जो शिक्षा के व्यक्तिगत और आध्यात्मिक विकास दोनों पर गहरे प्रभाव को रेखांकित करता है।

1.2.1. गुरुकुल प्रणाली और गुरु-शिष्य सम्बन्ध :

उपनयन संस्कार के पश्चात् छात्र गुरुकुल में प्रवेश करते थे, जहां वे गुरु के सानिध्य में शिक्षा- दीक्षा ग्रहण करते थे। गुरुकुल प्रणाली एक शैक्षणिक संस्थान से कहीं अधिक प्रभावी एवं व्यापक होती थी; यह एक समग्र वातावरण सकारात्मक सृजन था, जो दैनिक बातचीत के माध्यम से सम्मान, अनुशासन और सादगी के विकास पर बल देता था। छात्र न केवल औपचारिक निर्देश से सीखते थे बल्कि गुरु के कार्यों और चरित्र का अवलोकन और अनुकरण करके भी सीखते थे। इस समग्र दृष्टिकोण ने विनम्रता, दृढ़ता और ज्ञान के लिए गहरा सम्मान जैसे गुणों को बढ़ावा दिया जाता था।

इस प्रणाली में गुरु (शिक्षक) और शिष्य (छात्र) के बीच का संबंध (Bond) मौलिक प्रारूप में होता था। गुरु न केवल एक अकादमिक मार्गदर्शक, अपितु छात्र के बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक विकास के प्रति उत्तरदायी एक आध्यात्मिक मार्गदर्शक भी था। यह संबंध आपसी सम्मान, विश्वास और विकास के प्रति साझी प्रतिबद्धता पर आधारित होता था।

1.3. उपनयन संस्कार के आधुनिक समांतर प्रारूप :

हालांकि उपनयन संस्कार आधुनिक शिक्षा में व्यापक रूप से प्रचलित नहीं है, परन्तु इसकी आत्मा विद्यालय के पहले दिन के समारोह, अभिविन्यास और स्नातक समारोह जैसे प्रमुख कार्यक्रमों में परिलक्षित होती है, जो बालक के सीखने की यात्रा में प्रमुख संक्रमण के चरण का प्रतीकात्मक रूप है। शिक्षक-छात्र सम्बन्ध, शिक्षक दिवस और गुरु पूर्णिमा जैसी परंपराओं में परिलक्षित होता है, जो वैदिक काल में गुरुओं के लिए श्रद्धा को दर्शाता है। अनुशासन, ज्ञान के प्रति सम्मान और छात्र का समग्र विकास, जैसे मूल मूल्य आधुनिक शैक्षिक दर्शन, विशेष रूप से प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) में केंद्रीय भाव के साथ स्थान प्राप्त करते हैं।

1.3.1. आत्म-अनुशासन और सादगी: ईसीसीई का मूल मूल्य:

गुरुकुल-प्रणाली के केंद्र में आत्म-अनुशासन (तप) और सादगी (अपरिग्रह) के मूल्य आज की कई ईसीसीई विधियों में प्रतिबिंबित होते हैं, जहां दिनचर्या, आत्म-नियमन और व्यक्तिगत जिम्मेदारी पर जोर दिया जाता है। बच्चे स्वयं का, अपने पर्यावरण का और दूसरों का ध्यान रखना सीखते हैं, जो सादगी और सद्भाव के वैदिक आदर्शों को दर्शाता है। आधुनिक ईसीसीई का 'करके सीखना' दृष्टिकोण भी गुरुकुल प्रणाली के अनुभवात्मक शिक्षा के साथ प्रतिध्वनित होता है। जबकि अन्य अभ्यास/प्रथाएं विकसित हुई हैं, जैसे - ज्ञान के प्रति सम्मान, शिक्षकों के प्रति श्रद्धा और समग्र विकास जैसे मूल मूल्य दोनों पारंपरिक और समकालीन शिक्षा के आधार बने हुए हैं।

1.4. वैदिक मंत्रों की संज्ञानात्मक विकास में भूमिका:

वैदिक काल में, मंत्रों (श्लोकों) का जाप और स्मरण करना शिक्षा का ध्येय था। बार-बार पाठ करने की इस प्रथा को संज्ञानात्मक क्षमताओं, जिसमें स्मृति, ध्यान और भाषायी कौशल शामिल हैं, को बढ़ावा देने के लिए माना जाता था। आधुनिक तंत्रिका विज्ञान इसका समर्थन करता है तथा यह दर्शाता है कि बार-बार मौखिक अभ्यास तंत्रिका कनेक्शन और संज्ञानात्मक विकास को बढ़ा सकते हैं।

1.4.1. संज्ञानात्मक संवर्धन:

श्लोकों का जाप, जो प्रायः मधुर स्वर में किया जाता था, एक आध्यात्मिक और संज्ञानात्मक अभ्यास दोनों के रूप में काम करता था। इन श्लोकों का लयबद्ध पुनरावृत्ति और स्मरण करने के लिए नियत किया गया था, जिससे कि बालक के संज्ञानात्मक प्रकार्यों में सुधार किया जा सके। उदाहरण के लिए, ऋग्वेद में बुद्धि की देवी मेधा को समर्पित श्लोक (मंत्र) हैं, जो आध्यात्मिक प्रथाओं/अभ्यासों और बौद्धिक विकास के बीच संबंध के प्रतीक को स्पष्ट करते हैं:

'मेधा देवी जुषमाणा न आगाद् विश्वच्यां भद्रा सुमतिर् भवति।' (ऋग्वेद 10.125.3:) (बुद्धि की देवी मेधा आकर मुझे सभी ज्ञान और अच्छाई से युक्त आशीर्वाद दें।) यह आह्वान इस विश्वास को दर्शाता है कि बौद्धिक और संज्ञानात्मक क्षमताएं दिव्य प्रेरणा से बढ़ती हैं और पवित्र ग्रंथों का पाठ इन उपहारों को पोषण देता है।

1.4.2. पुनरावृत्ति और जाप (मंत्रजाप) के संज्ञानात्मक लाभ:

श्लोकों का पाठ करने की प्रथा ने स्मृति और ध्यान को मजबूत किया है। मंत्र जाप की लयबद्ध प्रकृति और वैदिक मंत्रों का व्यवस्थित रूप से याद रखना संज्ञानात्मक प्रकार्यों को सुदृढ़ करता था। समकालीन तंत्रिका विज्ञान ने पुष्टि की है कि इस तरह बार-बार मौखिक गतिविधियाँ स्मृति प्रतिधारण और ध्यान को बहुत अधिक वृद्धि कर सकती हैं, जो संज्ञानात्मक विकास में इस प्राचीन अभ्यास की भूमिका का समर्थन करती हैं।

1.5. उपनिषदीय दर्शन: आत्म-अन्वेषण और आत्म-ज्ञान:

उपनिषदीय दर्शन आत्म-अन्वेषण और आत्म (आत्मा) के ज्ञान की खोज पर केंद्रित है। यह सिखाता है कि वास्तविक ज्ञान अपने आंतरिक स्वभाव को समझने और ब्रह्म, परम वास्तविकता के साथ संबंध को साकार करने से प्राप्त होता है। अंतर्मुखता और ध्यान के माध्यम से, व्यक्तियों को भौतिक अस्तित्व से परे जाने और आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के लिए निर्देशित किया जाता है। यह दर्शन चेतना और आध्यात्मिक विकास की प्रकृति के बारे में अविनाशी अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, जैसा कि नीचे दृष्टव्य है:

1.5.1. उपनिषदों में ज्ञान की प्रकृति:

वैदिक चिंतन के दार्शनिक और रहस्यवादी चरमोत्कर्ष का प्रतिनिधित्व करने वाले उपनिषद आत्म-अन्वेषण और आत्म-विद्या (आत्म का ज्ञान) की खोज पर बल देते हैं। यह दार्शनिक दृष्टिकोण स्पष्ट करता है कि शिक्षा केवल तथ्यात्मक ज्ञान प्रदान करने से परे होनी चाहिए और इसके स्थान पर व्यक्तियों को अपने वास्तविक व्यक्तित्व और क्षमता को समझने की ओर निर्देशित करना चाहिए। उपनिषद अपने आंतरिक स्व के गहन अन्वेषण का प्रस्ताव करते हैं, जो आत्म-साक्षात्कार और बौद्धिक विकास, दोनों को सम्मिलित करने वाले एक शैक्षिक अनुभव की वृद्धि करते हैं।

1.5.2. उपनिषदों में संवादी (Dialogical) शिक्षण-पद्धति:

उपनिषद शिक्षा के लिए एक संवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं, जो पारंपरिक शिक्षाप्रद विधियों के विपरीत है। इस दृष्टिकोण का उदाहरण छान्दोग्य उपनिषद में प्राप्त होता है, जहां ऋषि उदालक आरुणि अपने पुत्र श्वेतकेतु के साथ वास्तविकता और आत्म की प्रकृति के बारे में एक गहन संवाद के लिए जाने जाते हैं। यह विधि आलोचनात्मक चिंतन और आत्म-विमर्श की वृद्धि करती है, जो वर्तमान आधुनिक शैक्षिक अभ्यासों का अनिवार्य घटक है।

छान्दोग्य उपनिषद में, उदालक आरुणि से 'तत् त्वम् असि' (तू ही वह है) वाक्यांश का उपयोग कर सभी में अस्तित्व और आत्म की एकता को व्यक्त करने के लिए करता है। यह शिक्षा उपनिषदों के आत्म के साथ ब्रह्मांड के अंतर्संबंध को समझने पर बल देती है। संवादी विधि छात्रों को अपने अस्तित्व पर गहराई से विचार करने के लिए प्रोत्साहित करती है, जो आधुनिक शैक्षिक तकनीकों के समान है, जो विमर्शी अधिगम और आत्म-जागरूकता की वृद्धि करती है।

आत्म का ज्ञान:

'आनन्दो ब्रह्मेत्यज्ञानं विज्ञानमुत्तमम्। आत्मा च यस्मिन् ज्ञानं स आत्मा तत् ब्रह्म॥' (मांडूक्य उपनिषद 2.6) (ब्रह्म का ज्ञान आनंद है। जिस आत्मा में यह ज्ञान है, वह आत्मा ही ब्रह्म है।) यह श्लोक इस बात पर बल देता है कि आत्म (आत्मा) को समझना परम वास्तविकता (ब्रह्म) को समझने के समान है, इस धारणा के अनुरूप कि शिक्षा केवल तथ्यात्मक अधिगम से आगे बढ़कर आत्म-साक्षात्कार तक भी विस्तारित होनी चाहिए।

वास्तविकता और आत्म की प्रकृति:

'सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म। यो वेद निहितं गुहायां पश्यति सः। आत्मानं स आत्मैवात्मनः प्रीणाति॥' (तैत्तिरीय उपनिषद 2.1.1:) (ब्रह्म सत्य, ज्ञान और अनंत है। जो इस सत्य को गुहा में छिपा हुआ देखता है, वह आत्मा को प्रसन्न करता

है।) यह श्लोक ब्रह्म की परम प्रकृति को सत्य और ज्ञान के रूप में बल देता है, उपनिषद के दृष्टिकोण को दर्शाता है कि आत्म को समझने से वास्तविकता की गंभीर समझ प्राप्त होती है।

1.6. आधुनिक ईसीसीई में वैदिक विचारों के अनुप्रयोग:

वैदिक विचार आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) को समग्र विकास, अनुभवात्मक शिक्षा और आत्म-अनुशासन और सादगी जैसे मूल्यों पर बल देने जैसे सिद्धांतों के माध्यम से प्रभावित करता रहता है। ये प्राचीन विचार बच्चों के बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक विकास में संतुलित विकास को बढ़ावा देकर वर्तमान तथा समकालीन शैक्षिक अभ्यासों/प्रथाओं को समृद्ध करते हैं।

1.6.1. पुनरावृत्ति के माध्यम से संज्ञानात्मक विकास:

आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) कार्यक्रम पुनरावृत्ति और मंत्रजाप के अभ्यास को शामिल करके लाभ उठा सकते हैं, जो वैदिक शिक्षा में पाए जाते हैं। लयबद्ध पुनरावृत्ति और याद करने वाली गतिविधियाँ छोटे बच्चों में स्मृति और ध्यान जैसे संज्ञानात्मक कौशल को काफी बढ़ा सकती हैं। वैदिक मंत्रों के समान बार-बार मौखिक अभ्यास तंत्रिका कनेक्शन की वृद्धि करने के लिए स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते हैं, जिससे उत्तम संज्ञानात्मक विकास को बढ़ावा मिलता है।

1.6.2. आत्म-अन्वेषण और विमर्शी अधिगम:

उपनिषदों का आत्म-अन्वेषण और आत्म-जागरूकता पर बल बालकों के मध्य विमर्शी अभ्यासों को प्रोत्साहित करके ईसीसीई में एकीकृत किया जा सकता है। शिक्षक ऐसे वातावरण की वृद्धि कर सकते हैं, जो जिज्ञासा, प्रश्न पूछने और अन्वेषण को प्रोत्साहित करते हैं, जो आत्म और ब्रह्म (विश्व-सामान्य रूप में) को समझने पर उपनिषदों के ध्यान के अभ्यास का अनुकरण करता है। यह दृष्टिकोण बच्चों को आत्म-जागरूकता की गंभीर भावना और अपने परिवेश की अधिक गंभीर समझ विकसित करने में सहायता करता है।

1.6.3. संवादी शिक्षण:

उपनिषदों में पाए जाने वाले समान संवादी विधियों को सम्मिलित करने से आधुनिक ईसीसीई अभ्यासों/प्रथाओं को बढ़ाया जा सकता है। बच्चों को सार्थक बार्तालाप में संलग्न करने और उन्हें प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करने से आलोचनात्मक सोच को प्रोत्साहित किया जा सकता है और गंभीर समझ को बढ़ावा दिया जा सकता है। यह उपनिषद परंपरा के अनुरूप है, जो संवाद और विमर्श को शिक्षण प्रक्रिया के प्रमुख घटकों के रूप में मानता है।

आधुनिक ईसीसीई अभ्यासों/प्रथाओं में इन प्राचीन वैदिक सिद्धांतों को एकीकृत करके, शिक्षक अधिगम अनुभव को समृद्ध कर सकते हैं, संज्ञानात्मक विकास, आत्म-जागरूकता और आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा दे सकते हैं। वैदिक शिक्षा का अविनाशी ज्ञान आज के शैक्षिक परिदृश्य में बालक के सर्वांगीण विकास तथा पोषण के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान कर रहा है।

1.7. जैन और बौद्ध दर्शन: शिक्षा में अहिंसा और सचेतनता:

जैन और बौद्ध दर्शन अहिंसा और सचेतनता के सिद्धांतों को शिक्षा में गंभीरता के साथ प्रस्तुत करते हैं, जो करुणा, आत्म-जागरूकता और नैतिक जीवन को बढ़ावा देते हैं। ये शिक्षाएँ सीखने के लिए एक शांतिपूर्ण, विमर्शी दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करती हैं, जो व्यक्तिगत विकास और कक्षा में सामंजस्यपूर्ण संबंधों को बढ़ावा देता है। एक विस्तृत अध्ययन इस प्रकार है-

1.7.1. जैन धर्म का ईसीसीई में योगदान: अहिंसा और आत्म-संयम:

जैन धर्म, अहिंसा और आत्म-अनुशासन के अपने मूल सिद्धांतों के साथ, बाल शिक्षा में गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। बाल चिकित्सा (बाल देखभाल) के लिए जैन दृष्टिकोण बच्चे के शारीरिक और आध्यात्मिक कल्याण दोनों को पोषण देने पर बल देता है, जिसमें सभी जीवित प्राणियों के प्रति नैतिक जिम्मेदारी की समझ को बढ़ावा देना प्रमुख है।

1.7.1.1. अहिंसा और इसके शैक्षिक निहितार्थ:

अहिंसा, जैन दर्शन का एक मूल सिद्धांत है, जो विचार, वाणी और कर्म में अहिंसा का आरोपण करता है। ईसीसीई में यह सिद्धांत एक पोषण करने वाले वातावरण का निर्माण करता है जहां बच्चे दूसरों के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से बातचीत करना सीखते हैं और सहानुभूति विकसित करते हैं।

'सर्वजीवसमाक्रमः सवस्त्यध्वन्तरायकः।'

सर्वशुद्धिसाधकः स तु अहिंसा न संशयः॥'- (तत्त्वार्थ सूत्र 7.2)

(अहिंसा सभी जीवित प्राणियों के कल्याण का साधन है, शुद्धता का मार्ग है और मुक्ति का मार्ग है।) यह श्लोक अहिंसा को शुद्धता और मुक्ति प्राप्त करने के लिए आवश्यक तत्व के रूप में जैन दृष्टिकोण को रेखांकित करता है, जो कम उम्र से ही नैतिक और दयालु व्यवहार को बढ़ावा देने में इसके महत्व को प्रकटित करता है।

1.7.1.2. आत्म-संयम और नैतिक व्यवहार:

जैन दर्शन व्यक्तिगत और आध्यात्मिक विकास के मार्ग के रूप में आत्म-अनुशासन और नैतिक आचरण पर बहुत बल देता है। ये सिद्धांत ईसीसीई के अभिन्न अंग हैं, बच्चों को अपनी आवेगों को प्रबंधित करने, जिम्मेदारी से कार्य करने और नैतिक अखंडता की भावना विकसित करना सिखाते हैं।

'सिद्धिः पातकं दोषं सम्यक्त्वं संयमः॥' (तत्त्वार्थ सूत्र 1.3) (गुणों की प्राप्ति, पापों से बचना और कार्यों पर नियंत्रण धर्म प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं।) यह श्लोक आत्म-संयम और नैतिक आचरण को व्यक्तिगत विकास के प्रमुख घटकों के रूप में बल देता है, जो ईसीसीई के लक्ष्यों के साथ संलग्न है, जो अनुशासन और नैतिक मूल्यों को स्थापित करता है।

1.7.2. बौद्ध धर्म: प्रारंभिक शिक्षा में सचेतनता और करुणा:

बौद्ध धर्म, सचेतना (सति) और करुणा (करुणा) पर बल देने के साथ, आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा संरचनाओं में मूल्यवान् अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। सचेतनता प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए शैक्षिक व्यवस्थाओं में तेजी से सम्मिलित किया जा रहा है ताकि बालकों में भावनात्मक विनियमन और जागरूकता का समर्थन किया जा सके।

1.7.2.1. शिक्षा में सचेतनता (Mindfulness):

सचेतना या सति, वर्तमान के प्रत्येक क्षण में पूरी तरह से उपस्थित और व्यस्त रहने को विनियमित करता है। ईसीसीई में सचेतनता तकनीक बच्चों को उत्तम ध्यान, भावनात्मक विनियमन और तनाव-प्रबंधन कौशल विकसित करने में सहायता करती हैं।

'मिञ्जषि च वेदसेणो वसुद्धमेव यथासुखं।

साचमेव जहामि यं विशुद्धो सत्त्वमात्मनम्॥' (धम्मपद 99)

(जो सत्य को अनुभव करता है, जो बातों/तथ्यों का सार देखता है, वह आसक्ति से मुक्त है और सुख में रहता है।) यह श्लोक बौद्ध दृष्टिकोण को दर्शाता है कि वास्तविकता की सही प्रकृति को समझने से आंतरिक शांति और संतोष मिलता है, जिसे शिक्षा में सचेतनता प्रथाओं/अभ्यासों के माध्यम से पोषित किया जा सकता है।

1.7.2.2. प्रारंभिक शिक्षा में करुणा:

करुणा, एक अन्य मौलिक बौद्ध सिद्धांत है, जिसे प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) में एकीकृत किया जा सकता है। बच्चों को दूसरों के साथ सहानुभूति रखने और दयालुतापूर्वक कार्य करने के लिए सिखाना, एक सहायक और देखभाल करने वाला शिक्षण वातावरण को बढ़ावा देता है।

जातक कथाएँ (बुद्ध के पिछले जीवन की कहानियों का संग्रह) बच्चों को नैतिक पाठ देने के लिए उपयोग में ली जा सकती हैं। एक उल्लेखनीय कहानी बंदर और मगर के बारे में है, जो बुद्धि और साधन संपन्नता के मूल्य को सिखाती है। इस कहानी में चतुर बंदर मगर को हरा देता है, यह दर्शाता है कि बुद्धि और त्वरित सोच कैसे कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर सकती है।

'सुखदुःखसहिष्णुश्च दानशीलो गुणोदितः।

स सर्वजनसङ्गतो बुद्धिमां येन तत्त्वतः॥' (जातक कथाएँ)

(जो सुख और दुःख के प्रति सहनशील है, उदार है और गुणों से संपन्न है और जो सभी लोगों के साथ बुद्धि और समझ के साथ जुड़ा हुआ है, वह बुद्धिमान है।) यह शिक्षा धैर्य, उदारता और बुद्धि के गुणों को स्पष्ट करती है, व्यक्तिगत विकास में करुणा और नैतिक व्यवहार के महत्व को पुष्टि करती है।

1.8. आधुनिक ईसीसीई में जैन और बौद्ध दर्शनों के अनुप्रयोग:

जैन और बौद्ध दर्शन के अहिंसा, सचेतनता और नैतिक व्यवहार जैसे व्यावहारिक अभ्यासों को शिक्षण विधियों में एकीकृत करके आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) को उत्तम आकार दिया जा सकता है। ये सिद्धांत बच्चों में तदानुभूति, आत्म-अनुशासन और विमर्शी चिंतन के विकास का समर्थन करते हैं, जो बालकों लिए एक तदानुभूति युक्त और संतुलित शिक्षण वातावरण का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

1.8.1. अहिंसा और नैतिक व्यवहार का प्रोन्नयन:

अहिंसा के सिद्धांत को प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) में एकीकृत करके एक सम्मानजनक और अहिंसक वातावरण बनाया जा सकता है, जहां बच्चे साथियों और वयस्कों के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से बार्तालाप करना सीखते हैं। तदानुभूति, दयालुता और नैतिक व्यवहार की वृद्धि करने वाली गतिविधियाँ, एक करुणामय और सम्मानजनक शिक्षण के को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक हैं।

1.8.2. सचेतनता अभ्यासों को सम्मिलित करना:

ध्यान, श्वास-अभ्यास और ध्यान को केंद्रित करने वाली गतिविधियाँ (विषयना आदि), सचेतनता तकनीकों को भावनात्मक विनियमन, एकाग्रता और आत्म-जागरूकता को बढ़ाने के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) कार्यक्रमों में एकीकृत किया जा सकता है। ये प्रथाएँ/अभ्यास बच्चों को अपनी भावनाओं का प्रबंधन करने और उपस्थिति की एक अधिक गंभीर भावना विकसित करने में सहायता करती हैं।

1.8.3. करुणा और सहानुभूति को बढ़ावा देना:

कहानी कथन, भूमिका निर्वहन और सामुदायिक सेवा गतिविधियों के माध्यम से करुणा और तदानुभूति सिखाना बच्चों को दूसरों की भावनाओं और दृष्टिकोण की गहरी समझ विकसित करने में सहायता कर सकता है। बौद्ध धर्म के करुणा के सिद्धांत के माध्यम से देखभाल (केयरिंग) और सहयोगी अंतःक्रिया पर बल देने वाले पाठ्यक्रम के विकास का मार्गदर्शन प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार जैन और बौद्ध दर्शनों से प्राप्त अभ्यासों को प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) में सम्मिलित करके शिक्षक बालक के लिए पोषणीय वातावरण का निर्माण कर सकते हैं, जो बालक के समग्र विकास का समर्थन करता है, जिसमें नैतिक व्यवहार, सचेतनता और करुणा सम्मिलित है। इन प्राचीन सिद्धांतों का एकीकरण बालकों के लिए एक संतुलित और समरस शिक्षण अनुभव को बढ़ावा देने के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

२. गुरुकुल-प्रणाली: प्राचीन भारत में ईसीसीई का आधार:

गुरुकुल-प्रणाली प्राचीन भारत में प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के लिए आधारभूत दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें गहन (immersive) अधिगम और शिक्षक-छात्र का निकटतम संबंधों के माध्यम से समग्र विकास पर बल देती है। इस प्रणाली ने शैक्षिक निर्देशन को नैतिक और आध्यात्मिक मार्गदर्शन के साथ एकीकृत किया है तथा व्यापक शैक्षिक अभ्यासों के लिए एक उचित मंच का निर्माण किया है।

2.1. गुरुकुल प्रणाली की संरचना और अभ्यास:

गुरुकुल-प्रणाली प्राचीन भारत में एक आधारभूत शैक्षिक संस्था थी, जहाँ बच्चे एक गुरु के मार्गदर्शन में एक समग्र शिक्षण वातावरण में सर्वांगीण विकास का लाभ प्राप्त करते थे। इस प्रणाली ने प्रत्यक्ष अवलोकन, अभ्यास और विमर्श के माध्यम से अनुभवात्मक शिक्षा को बढ़ावा दिया जाता था, जो छात्रों के बौद्धिक और चरित्र निर्माण को आकार देती थी।

2.2. गुरुकुल में जीवन-कौशल:

गुरुकुल में, शिक्षा अकादमिक विषयों से परे व्यावहारिक जीवन-कौशल तक विस्तार पाती थी। छात्र स्वावलंबन, खाना पकाना, सफाई और बागवानी जैसी गतिविधियों में सक्रिय भूमिका का निर्वहन करते थे, जिससे उनका शारीरिक विकास और व्यावहारिक ज्ञान सुनिश्चित होता था। यह व्यावहारिक दृष्टिकोण आधुनिक मॉटेसरी विधि के अनुरूप ही है, जो प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा में अनुभवात्मक शिक्षा और व्यावहारिक जीवन-कौशल को महत्व देता है।

महाभारत कालीन गुरुकुलीय -शिक्षा समकालीन गुरुकुलीय प्रणाली की व्यापक प्रकृति को दर्शाता है। द्रोणाचार्य के मार्गदर्शन में पांडवों ने न केवल युद्ध की कला में सफलता प्राप्त की अपितु नैतिकता, राजनीति और राज्यशास्त्र

के बारे में भी विस्तार से सीखा। व्यावहारिक और बौद्धिक प्रशिक्षण का यह मिश्रण गुरुकुल के समग्र शिक्षा के अंग पर बल देता है। मनुस्मृति से एक श्लोक इस तथ्य का समर्थन करता है -

"यथाचरति तत्त्वज्ञः पौरुषस्य महान् पुरा।

तथान्यस्य तत्त्वज्ञानं अनुशासनम् ॥" (मनुस्मृति 7.145)

(जैसे एक प्रबुद्ध व्यक्ति धर्म के सिद्धांतों का पालन करता है, वैसे ही दूसरों को भी विद्वान द्वारा प्रदान किए गई शिक्षाओं और अनुशासन का पालन करना चाहिए।) यह श्लोक छात्रों में व्यावहारिक और नैतिक दोनों तरह की शिक्षाएँ देने और उनके सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करने में गुरु की भूमिका पर प्रकाश डालता है।

2.3. गुरुकुल में नैतिक और नीतिशास्त्रीय प्रशिक्षण

गुरुकुल प्रणाली ने नैतिक और नीतिशास्त्रीय गुणों के विकास पर महत्वपूर्ण बल दिया है। गुरु की प्रतिदिन की दिनचर्या और प्रत्यक्ष शिक्षा के माध्यम से, छात्रों को सत्यवादिता (सत्य), अहिंसा और आत्म-संयम (तप) जैसे गुणों के विकास के लिए निर्देशित किया जाता था।

2.3.1. सत्यवादिता और धार्मिकता (कर्त्तव्यपरायणता):

तैत्तिरीय उपनिषद् सत्यवादिता और धार्मिकता (कर्त्तव्यपरायणता) के महत्व पर बल देता है, जो गुरुकुल के नैतिक प्रशिक्षण के अभिन्न अंग थे।

'सत्यं वद धर्मं चर' (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.11.1) (सत्य बोलो, धर्म का पालन करो।) यह श्लोक गुरुकुल प्रणाली में पढ़ाए जाने वाले मूलभूत नैतिक सिद्धांतों को दर्शाता है, जो व्यक्तिगत विकास में ईमानदारी और कर्त्तव्यपरायण जीवन के महत्व को रेखांकित करता है।

2.3.2. अहिंसा और आत्म-संयम:

जैन धर्म के अहिंसा (अहिंसा) और तप (आत्म-अनुशासन) के सिद्धांत भी गुरुकुल के नैतिक शिक्षा के प्रमुख अंग थे। छात्रों को जीवन के सभी पहलुओं में अहिंसा का अभ्यास करने और आंतरिक शांति और नैतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए आत्म-संयम विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था।

'दयं दानं च साधूनां नृणां नित्यं प्रयत्नतः। स्वधर्मे स्थिता शीलं च तपः' भगवद् गीता 16.1 (साधुओं के प्रति दया और दान और अपने कर्त्तव्य में दृढ़ता, साथ ही आत्म-अनुशासन, धर्म-आधारित व्यवहार के लक्षण हैं।) यह श्लोक करुणा, दान और आत्म-अनुशासन के मूल्यों पर जोर देता है, जो गुरुकुल के नैतिक प्रशिक्षण का प्रमुख आधार थे।

'यमः प्रत्यक्षानुभवशक्तिरविरोधः।

अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रहः ॥' (पतंजलि-योग सूत्र 2.30)

(नैतिक अनुशासन अहिंसा, सत्यवादिता, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक नहीं रखना) है।) यह श्लोक पतंजलि के योग सूत्रों से नैतिक सिद्धांतों को स्पष्ट करता है, जो गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली के अभिन्न अंग थे, जो आत्म-संयम और नैतिक आचरण पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

2.4. आधुनिक ईसीसीई में गुरुकुल प्रणाली के अनुप्रयोग:

2.4.1. समग्र विकास:

गुरुकुल प्रणाली का समग्र दृष्टिकोण, व्यावहारिक जीवन-कौशल के साथ बौद्धिक और नैतिक शिक्षा का संयोजन, आधुनिक ईसीसीई ढांचों में प्रतिबिंबित होता है जो बालक के समग्र विकास पर बल देता है। व्यावहारिक गतिविधियों को शैक्षिक अधिगम के साथ एकीकृत करने वाले कार्यक्रम संतुलित विकास को बढ़ावा देते हैं।

2.4.2. नैतिक और नीतिशास्त्रीय शिक्षा:

ईसीसीई में नैतिक और नीतिशास्त्रीय प्रशिक्षण को सम्मिलित करना, जैसे ईमानदारी, करुणा और आत्म-अनुशासन जैसे गुणों को सिखाना, शिक्षार्थियों के चरित्र को आकार देने में मदद करता है। गुरुकुल का इन मूल्यों पर ध्यान केंद्रित करना, नैतिक और उत्तरदायी व्यक्तित्वों को विकसित करने में प्रासंगिक बनाता है।

2.4.3. अनुभवात्मक शिक्षा:

गुरुकुल प्रणाली का अनुभवात्मक शिक्षा का दृष्टिकोण, जहां छात्र प्रत्यक्ष अनुभव और अभ्यास के माध्यम से सीखते हैं, समकालीन शैक्षिक प्रथाओं के अनुरूप है जो व्यावहारिक गतिविधियों और वास्तविक दुनिया के अनुप्रयोगों पर बल देते हैं।

आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा में गुरुकुल-प्रणाली के शाश्वत सिद्धांतों को एकीकृत करके, शिक्षक बालकों के लिए पोषणीय वातावरण बना सकते हैं जो समग्र विकास, नैतिक विकास और व्यावहारिक शिक्षा का समर्थन करते हैं, जो प्राचीन भारतीय शैक्षिक परंपराओं की विरासत को जारी रखते हैं।

3. भारतीय ज्ञान प्रणालियों में संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास:

भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास के बारे में समृद्ध अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं, जो प्राचीन ज्ञान को समग्र शैक्षिक अभ्यासों के साथ प्रस्तुत करती हैं। ये अभ्यास/परंपराएँ मन, भाषा और भावना के अंतर्संबंध पर बल देती हैं, जो अच्छी तरह से विकसित होने के लिए एक व्यापक संरचना प्रदान करती हैं।

3.1. संस्कृत और संज्ञानात्मक विकास:

संस्कृत भाषा वैज्ञानिकता, अपने सटीक व्याकरण और ध्वनिगत परिशुद्धता के साथ, संज्ञानात्मक क्षमताओं की वृद्धि करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। मंत्र-जाप और श्लोकों का पाठ करने की प्रथा के साथ संस्कृत की संरचित/सुगठित प्रकृति दोनों मस्तिष्क के गोलार्धों को उत्तेजित/अभिप्रेरित करती है, जिससे बेहतर स्मृति, ध्यान और समस्या-समाधान कौशल में सुधार होता है। यह संज्ञानात्मक संवर्धन विभिन्न श्लोकों द्वारा समर्थित है, जो मानसिक अनुशासन और नियंत्रण पर बल देते हैं।

'यस्तु सर्वाणि इन्द्रियाणि मनसा संयम्य आस्ते।

उपशान्तः सः परः श्रेयोः सुखमुपैति॥' (अथर्ववेद 5.1.5)

(जो मन से सभी इन्द्रियों को नियंत्रित करता है, वह शांत हो जाता है, वह उच्चतम कल्याण प्राप्त करता है, वह सुख प्राप्त करता है।) यह श्लोक मानसिक अनुशासन के महत्व को रेखांकित करता है, जो संस्कृत के अभ्यास से प्राप्त होने वाला एक प्रमुख लाभ है। भाषा में सिद्धता प्राप्त करने और पाठ करने के माध्यम से व्यक्ति अपनी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं और मानसिक क्षमताओं पर अधिक नियंत्रण विकसित कर पाते हैं।

'योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥' (भगवद् गीता 2.48)

(अपने निर्धारित कर्म करो, सफलता और असफलता के प्रति छोड़कर। इन सबके प्रति समत्व ही योग है।) यह श्लोक समता और मानसिक संतुलन की अवधारणा को स्पष्ट करता है, जो संस्कृत सीखने जैसे अनुशासित अभ्यासों के माध्यम से विकसित की जाती है।

3.2. प्राचीन भारतीय शिक्षा में बहुभाषावाद:

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणालियों ने सदैव ही बहुभाषावाद (Multilingualism) को अपनाया है, जो बच्चों को संस्कृत, प्राकृत, पाली और तमिल सहित विभिन्न भाषाओं के संपर्क में लाता था। कई भाषाओं के संपर्क में आने से संज्ञानात्मक लचीलापन, कार्यकारी कामकाज और सामाजिक तदानुभूति में वृद्धि होती है। इस तरह की बहुभाषी शिक्षा के लाभ आधुनिक अनुसंधान में अच्छी तरह से प्रलेखित हैं और प्राचीन बौद्ध शिक्षा के अभ्यासों में दृष्टव्य हैं।

बौद्ध भिक्षु अधिकांशतः कई भाषाओं में प्रवीण होते थे, जिससे वे विविध क्षेत्रों में शिक्षाओं को साझा कर सकते थे। इस प्रथा ने न केवल बौद्ध धर्म के प्रसार की सुविधा प्रदान की बल्कि संज्ञानात्मक और सामाजिक विकास में भी योगदान प्रदान किया। आधुनिक ईसीसीई प्रथाएं/अभ्यास इस बात को प्रतिबिंबित करते हैं कि द्विभाषी और बहुभाषी शिक्षा को बढ़ावा देकर, संज्ञानात्मक और सामाजिक कौशल बढ़ाने में इसकी भूमिका को स्वीकार किया जाता है।

3.4. कथावाचन (कहानी सुनाना) की भावनात्मक विकास में भूमिका:

कथावाचन, कहानी सुनाने की पारंपरिक कला, भारतीय शिक्षा का एक आधार रहा है। महाभारत, रामायण और पुराणों जैसी महाकाव्यों की कहानियों के माध्यम से बच्चों को नैतिक मूल्य, भावनात्मक बुद्धि और व्यावहारिक जीवन पाठ सिखाए जाते थे। इन कहानियों ने भावनात्मक और नैतिक विकास को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है।

युधिष्ठिर और यक्ष की कथा, जहां युधिष्ठिर यक्ष के प्रश्नों का उत्तर बुद्धि और शुचिता से देते हैं, कर्तव्यनिष्ठा और निर्णय लेने में बुद्धि के महत्व के बारे में शाश्वत सीख प्रदान करते हैं। यह कथा भावनात्मक विकास में अंतर्दृष्टि प्रदान करते हुए शुचिता और बुद्धि के मूल्य को सिखाती है।

'धर्मस्य तत्त्वमाहं प्रक्षामि तव तत्त्ववित्।

अस्तु ते हि तत्त्वज्ञः प्रेक्ष्यस्व प्रपन्नमुखः॥' (रामायण, युद्ध कांड 107.21)

(मैं तुम्हें धर्म का सार बताता हूँ, जो ज्ञानी हो, तुम सत्य का अवलोकन करो।) यह श्लोक नैतिक और भावनात्मक ज्ञान प्रदान करने में कथावाचन की भूमिका को स्पष्ट करता है, भावनात्मक और नैतिक शिक्षा के लिए एक उपकरण के रूप में कथा के महत्व को पुष्टि करता है।

'धर्मेण प्रजाः सर्वाः समृद्धाः सदा सुखाः।

धर्मात् लाभः परो भवेत्॥' (जातक कथाएँ, अध्याय 1)

(धर्म से सभी प्राणी समृद्ध और हमेशा सुखी होते हैं। धर्म से परम लाभ होता है।) यह श्लोक जातक कथाओं से भावनात्मक विकास और कल्याण पर कहानी कथन में अंतर्निहित नैतिक और नीतिशास्त्रीय शिक्षाओं के गहरे प्रभाव को प्रदर्शित करता है।

संस्कृत शिक्षा, बहुभाषी शिक्षा और कथावाचन के एकीकरण के माध्यम से प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणालियों (IKS) ने संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान किया है। ये अभ्यास आधुनिक शैक्षिक ढांचों को प्रभावित करती रहती हैं, जो अच्छी तरह से व्यक्तित्वों को पोषण देने के लिए इन प्राचीन परंपराओं की शाश्वत प्रासंगिकता पर बल देती हैं।

4. पञ्चकोषीय ज्ञान और ईसीसीई:

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के संदर्भ में, भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) के पञ्चकोश की अवधारणा बाल विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है। पांच कोश - अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय - एक बच्चे के विकास के शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक पहलुओं को रेखांकित करते हैं। यहां स्पष्ट है कि प्रत्येक कोश एक अच्छी तरह से विकसित ईसीसीई ढांचे को आकार देने में किस प्रकार भूमिका का निर्वहन कर सकता है:

4.1. अन्नमय कोश (भौतिक आवरण)

तैत्तिरीय उपनिषद् (2.1) अन्नमय कोश को 'भोजन से बना' (अन्नमयः) के रूप में वर्णित करता है। यह बल देता है कि भौतिक शरीर का पोषण और निरंतरता भोजन द्वारा होती है, जो सीधे किसी के स्वास्थ्य और शक्ति को प्रभावित करता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: छोटे बालकों के लिए अच्छे पोषण और शारीरिक कल्याण पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है।

उदाहरण: इन उपनिषदीय शिक्षाओं का पालन करते हुए, बच्चों को ऋषि अगस्त्य जैसे बुद्धिमान व्यक्तियों के बारे में कहानियों के माध्यम से सिखाया जा सकता है, जो अपनी छोटे शारीरिक गठन के पश्चात्, उचित पोषण और व्यायाम के माध्यम से संतुलन बनाए रखकर महान शारीरिक साहसिक कार्य कर सकते हैं। योग सूत्रों (सूत्र 2.46 - स्थिर सुख आसन) के आधार पर योग जैसी शारीरिक गतिविधियों को शामिल करने से बच्चों को अपने शारीरिक मुद्राओं में आराम और स्थिरता खोजने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जिससे संक्रियात्मक कौशल बढ़ता है।

4.2. प्राणमय कोश (प्राण शक्ति आवरण):

प्रश्न उपनिषद् (3.5) में, प्राण (जीवन शक्ति) को 'जीवन-श्वास, शरीर और मन को बनाए रखने और संचालन, चलाने वाली ऊर्जा' के रूप में वर्णित किया गया है। यह कोश प्राण की जीवन शक्ति बनाए रखने में भूमिका पर बल देता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: सरल श्वास अभ्यास और लय-आधारित गतिविधियाँ शुरू करने से छोटे बच्चों को अपनी जीवन शक्ति के प्रति अधिक सचेत होने में सहायता मिल सकती है।

उदाहरण: हनुमान जी की कहानी से प्रेरणा लेते हुए, जो प्राण की सिद्धता का प्रतीक है, शिक्षक बच्चों को शांत करने और उनकी ऊर्जा के बारे में अधिक जागरूक बनाने के लिए प्राणायाम जैसे श्वास -अभ्यास का उपयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए - सरल लयबद्ध श्वास या भ्रामरी प्राणायाम के द्वारा भावनाओं को नियंत्रित करने और ऊर्जा को मार्गान्तरित करने में मदद कर सकता है।

4.3. मनोमय कोश (मानसिक आवरण):

भगवद् गीता (अध्याय 6, श्लोक 5) मन और भावनाओं को नियंत्रित करने पर चर्चा करती है: 'मन से स्वयं को उन्नत करना चाहिए, स्वयं में हीनता का भाव पोषित नहीं होना चाहिए, क्योंकि मन कर्मबद्ध आत्मा का मित्र है और उसका शत्रु भी है' (उद्धरेत् आत्मानम् आत्मानम् अवसादयेत्)।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: बच्चों को कथा-वाचन (कहानी सुनाने) जैसी गतिविधियों में सम्मिलित करना, जो भावनात्मक साक्षरता को बढ़ावा देती है, उन्हें भावनाओं को पहचानने और प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने में सहायता करती है।

उदाहरण: महाभारत की कहानी से यह दृष्टव्य है कि किस प्रकार दबाव में भी युधिष्ठिर शांति-भाव धारण करता है, बालकों को इन उदाहरणों के लिए अनुकूलित किया जा सकता है, उन्हें भावनाओं को प्रबंधित करने और भावनात्मक

बुद्धि विकसित करने के तरीके सिखाए जा सकते हैं। भूमिका निर्बहन, जैसी गतिविधियाँ बच्चों को अलग-अलग परिस्थितियों का सामना करने के तरीके पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं, जो मनोमय कोश के विकास के अनुरूप हैं।

4.4. विज्ञानमय कोश (ज्ञान या बौद्धिक आवरण):

तैत्तिरीय उपनिषद् (2.4) में, विज्ञानमय कोश को बुद्धि और ज्ञान के आवरण के रूप में वर्णित किया गया है, जहाँ विवेक और ज्ञान निवास करते हैं। यह आधारभूत विचार प्रक्रियाओं से परे निर्णय लेने और समझने का मार्गदर्शन करता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: जिज्ञासा और समस्या-समाधान को बढ़ावा देने के लिए ऐसी गतिविधियों का आयोजन करें, जो गंभीर सोच और समझ के प्रति सजग करें।

उदाहरण: नचिकेता (जो यम (मृत्यु के देवता) से ज्ञान की याचना करता है) की उपनिषदीय कथा से जिज्ञासा का अनुप्रयोग दृष्टव्य है, जो एक बच्चे में जिज्ञासा और बौद्धिक खोज के महत्व को सिखाती है। बच्चों को प्रश्न पूछने, पहलियाँ सुलझाने या व्यावहारिक प्रयोगों में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करने से उनके बौद्धिक समझ का विकास होता है। रचनात्मक कहानी सुनाने या आलोचनात्मक सोच, अभ्यास का उपयोग गहन संज्ञानात्मक जुड़ाव को पोषित करने के लिए किया जा सकता है।

4.5. आनंदमय कोश (आनंद आवरण):

तैत्तिरीय उपनिषद् (2.5) आनंदमय कोश को आनंद या आनंद का आवरण के रूप में वर्णित करता है। यह शुद्ध आनंद और पूर्णता की अवस्था का प्रतिनिधित्व करता है, जो अपने वास्तविक स्व (आत्मा) के साथ सामंजस्य में होने से उत्पन्न होता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: छोटे बच्चों के लिए भावनात्मक सुरक्षा और आनंद को बढ़ावा देने वाला वातावरण बनाना महत्वपूर्ण है।

उदाहरण: वृंदावन में कृष्ण के बचपन की कहानियों से प्रेरणा लेते हुए, जो आनंद, खेल और बिना शर्त प्यार का प्रतीक है, शिक्षक ऐसा वातावरण बना सकते हैं जहाँ बच्चे अपनी रचनात्मकता का पता लगाने और कला, संगीत और खेल के माध्यम से आनंद का अनुभव करने के लिए स्वतंत्र हों। नृत्य और समूह खेल के माध्यम से मुक्त अभिव्यक्ति आनंदमय कोश के अनुरूप आनंद की भावनाओं वृद्धि करती है।

4.6. पञ्चकोषीय ज्ञान का ECCE में एकीकरण तथा अनुप्रयोग:

समग्र खेल-आधारित शिक्षा: संस्कृत ग्रंथों से कहानियों और प्रथाओं/अभ्यासों को सम्मिलित करने से समग्र अवधारणाओं को एक संबंधित तरीके से प्रस्तुत करने में सहायता मिलती है। उदाहरण के लिए, योगसूत्रों से आसन

अभ्यास (शारीरिक मुद्राएं) या वेदों से सरल मंत्रों को सम्मिलित करने से शरीर और मन दोनों को सशक्त किया जा सकता है।

सचेतनता और अहिंसा: जैन और बौद्ध धर्म से प्राप्त अहिंसा जैसी अवधारणाओं को बालकों को दया और दूसरों के प्रति सम्मान सिखाने के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है, जिससे एक सामंजस्यपूर्ण सामाजिक वातावरण को बढ़ावा मिलता है।

आध्यात्मिक विकास: आनंदमय कोष को आध्यात्मिक प्रथाओं/अभ्यासों जैसे मंत्रोच्चारण या प्रकृति की ध्वनियाँ सुनकर पोषित किया जा सकता है, ईशोपनिषद् के मंत्र 'जड़ -चेतन प्राणियों वाली यह सृष्टि सर्वत्र परमात्मा/दिव्यता से व्याप्त है' (ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्) से प्रेरणा लेकर, व्यापक विश्व के साथ संयोजन की भावना को बल दिया जा सकता है।

पञ्चकोषीय ज्ञान का उपयोग करने से ईसीसीई कार्यक्रम शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास को एक सार्थक तरीके से एकीकृत कर सकते हैं। इन विकासात्मक चरणों को प्राचीन ग्रंथों से आधार बनाकर, शिक्षक बच्चों को एक गहरा सांस्कृतिक रूप से समृद्ध और समग्र शिक्षण अनुभव प्रदान कर सकते हैं जो उनके समग्र कल्याण के लिए प्रासंगिक और पोषणीय हो।

5 . उत्सव और अनुष्ठानों के माध्यम से भावनात्मक और सामाजिक विकास:

उत्सव और अनुष्ठान सांस्कृतिक मूल्यों, सामुदायिक संयोजन और साझा अनुभवों को सुदृढ़ करके भावनात्मक और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। ये परंपराएं व्यक्तियों का समबन्ध, भावनाओं को व्यक्त करने और सामाजिक सामंजस्य बनाने के लिए सार्थक अवसर प्रदान करती हैं।

5.1. उत्सव और अनुष्ठानों का शैक्षिक महत्व:

दीपावली, होली, मकर संक्रांति और रक्षाबंधन जैसे भारत के उत्सव बालकों को सामाजिक गतिविधियों में हर्ष से सम्मिलित होने, सामुदायिक संबंध बनाने और सहानुभूति विकसित करने के लिए मूल्यवान अवसर प्रदान करते हैं। इन उत्सवों से संबंधित अनुष्ठान और परंपराएं न केवल उत्सवपूर्ण हैं बल्कि शैक्षिक भी हैं, बच्चों को सहयोग, रचनात्मकता और उदारता के बारे में सिखाती हैं।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चिद्दुःखभाग्भवेत्॥" (मनुस्मृति 4.148) (सभी सुखी हों, सभी रोगमुक्त हों। सभी कल्याण को देखें, कोई दुःखी का भागी न बने।) यह श्लोक सामुदायिक भावना और सामूहिक कल्याण की आकांक्षा को रेखांकित करता है, जो उत्सवों के आयोजन प्रसारित मूल्यों के केंद्र में हैं। इन उत्सवों से साझा खुशी और परस्पर देखभाल पर अधिक बल देने से सहानुभूति और पारस्परिक सम्मान की शिक्षाओं को बल मिलता है।

"आयुरारोग्यमैश्वर्यं च सम्पदां मितानीकृते।

श्रीः प्रीयतामैश्वर्यं भूतपूर्वाणि चेतसा॥" (ऋग्वेद 10.19.5)

(आपको दीर्घायु, स्वास्थ्य और समृद्धि का आशीर्वाद प्राप्त हो, जो अनुग्रह और अतीत की सम्पन्नता से युक्त हो।) यह श्लोक कल्याण और समृद्धि के मूल्यों को स्पष्ट करता है, जिन्हें मिष्ठान्न साझा करने और उपहार देने जैसी उत्सव की परंपराओं के माध्यम से मनाया और सुदृढ़ किया जाता है।

5.2. पारंपरिक स्वदेशी खेल और भावनात्मक लचीलापन (Resilience):

(लीला: एक शैक्षिक उपकरण के रूप में खेल)

भारतीय परंपराओं में, लीला (खेल) को केवल मनोरंजन के रूप में नहीं, बल्कि शिक्षा के एक अभिन्न अंग के रूप में देखा जाता है। कबड्डी, खो-खो और गिल्ली डंडा जैसे पारंपरिक खेल बच्चों में शारीरिक सहनशक्ति, टीमवर्क और भावनात्मक लचीलापन (Resilience) बढ़ाने के लिए डिज़ाइन किए गए थे। इन खेलों में अधिकांशतः रणनीतिक सोच, सहयोग और धीरज (perseverance) सम्मिलित थी, जो महत्वपूर्ण जीवन-कौशल के विकास में योगदान करती थी।

"समानं च योऽस्मिन् सुमनः समत्वं योग उच्यते।

सत्सङ्ग्रहणं योगः सदा सन्तोषमायुषः॥" (भगवद्गीता 2.48)

(समत्व ही योग है। कार्यों में एकरूपता का अभ्यास ही योग है। यह सत्संग ही योग है, जो सदा संतोष और आयु प्रदान करता है।) यह श्लोक भावनात्मक संतुलन और लचीलापन (Resilience) बनाए रखने के महत्व को दर्शाता है, जो पारंपरिक खेलों के माध्यम से बढ़ावा दिया जाता है जो बच्चों को सफलता और असफलताओं के मध्य भावनात्मक संतुलन बनाना सिखाता है।

"आत्मनं रक्षति धर्मेण भाग्यश्च सदा योगः।

संपत्तिः सर्वकामैश्च सुखा च निरपेक्षितः॥" (महाभारत, शांति पर्व 161.9)

(धर्म से अपने आप को रक्षा करता है और भाग्य भी हमेशा योग होता है। संपत्ति सभी इच्छाओं से मुक्त हो जाती है और सुख भी निरपेक्षित होता है।) यह श्लोक धर्म और आत्म-नियंत्रण की भूमिका को रेखांकित करता है, जो पारंपरिक खेल और खेलों के माध्यम से पोषित होते हैं। लीला के माध्यम से सीखे गए कौशल बच्चे के भावनात्मक संतुलन और लचीलापन (Resilience) बनाए रखने की क्षमता में योगदान करते हैं।

उत्सवों और पारंपरिक खेलों के माध्यम से भारत में बच्चों को महत्वपूर्ण सामाजिक और भावनात्मक कौशल विकसित करने के अवसर प्रदान किए जाते हैं। ये प्रथाएं प्राचीन शिक्षाओं में गहराई से निहित हैं और सहयोग, सहानुभूति और लचीलापन (Resilience) में मूल्यवान सीख देना जारी रखती हैं, जो समग्र विकास पर बल देने वाले आधुनिक शैक्षिक सिद्धांतों के अनुरूप हैं।

6. स्वास्थ्य और शारीरिक विकास: आयुर्वेद से अंतर्दृष्टि:

आयुर्वेद स्वास्थ्य और शारीरिक विकास के बारे में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, संतुलन, समग्र कल्याण और व्यक्तिगत देखभाल पर बल देता है। इसके सिद्धांत इष्टतम शारीरिक स्वास्थ्य और समग्र जीवन शक्ति को वृद्धि देने के लिए आहार, जीवनशैली और प्राकृतिक उपचारों के एकीकरण का मार्गदर्शन करते हैं।

6.1. बाल चिकित्सा के लिए आयुर्वेदिक सिद्धांत: प्रारंभिक बाल्यावस्था पोषण का महत्व:

आयुर्वेद में, बच्चे के जीवन के प्रारम्भिक वर्षों को शारीरिक और मानसिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। चरक संहिता मजबूत विकास को बढ़ावा देने और बीमारी को रोकथाम के उद्देश्य से विशिष्ट आहार संबंधी दिशानिर्देश प्रदान करती है।

"बालस्य प्रकृतिः स्थिरा मृदुभूताः शरीरिणां, रसनेइव कृता स्थिराः बलवन्ताः सुखं जीवति।" (चरक संहिता 1.32) (बच्चों का स्वभाव स्थिर और कोमल होता है और उनका बल और स्थिरता सही पोषण से विकसित होती है।) यह श्लोक बालकों के शारीरिक और मानसिक स्थिरता का समर्थन करने में उचित पोषण की महत्वपूर्ण भूमिका पर बल देता है, जो प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) में पोषण संबंधी आवश्यकताओं की आधुनिक समझ के अनुरूप है।

"आयुर्वेदश्च प्राणश्च वायुश्च भूतो भवश्च ते, आरोग्यं च जीवितं श्रेष्ठं इंद्रियं च नष्टितम्।" (चरक संहिता 1.44) (शरीर का स्वास्थ्य, जीवन और इंद्रियों का रखरखाव आयुर्वेद, प्राण और प्राकृतिक तत्वों के संतुलित अंतःक्रिया से होता है।) यह श्लोक आयुर्वेदिक सिद्धांतों की समग्र प्रकृति को स्पष्ट करता है, जहां पोषण एक व्यापक प्रणाली का हिस्सा है जिसमें इष्टतम स्वास्थ्य के लिए प्राकृतिक तत्वों के साथ संतुलन और सामंजस्य सम्मिलित है।

6.2. शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए आयुर्वेदिक अभ्यास:

अभ्यंग (तेल मालिश) और योग जैसी आयुर्वेदिक प्रथाएं कम उम्र से ही समग्र कल्याण को बढ़ावा देने में अभिन्न हिस्सा रही हैं। ये अभ्यास शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्पष्टता का समर्थन करती हैं, जिन्हें आधुनिक ईसीसीई संरचना में तेजी से मान्यता दी जा रही है।

"आरोग्यं शीलमायुष्यं बलमिन्द्रिय सुखं ज्ञानं च कल्याणं चार्थो धर्मं च शोभनम्।" (सुश्रुत संहिता 15.41) (अच्छा स्वास्थ्य, लंबा जीवन, बल, सुख, ज्ञान, पुण्य और धन सभी आयुर्वेद का अभ्यास करने से आता है।) यह श्लोक आयुर्वेदिक प्रथाओं/अभ्यासों के व्यापक लाभों को रेखांकित करता है, जिसमें शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक कल्याण और जीवन की समग्र गुणवत्ता सम्मिलित है।

"वयस्य हि प्राणं चापि पानियां चास्य वारजितम्, प्राणयामो धृतिः शांतिः आरोग्यं शीलमायुतम्।" (चरक संहिता 3.45)

(जीवन का श्वास, उपयुक्त पदार्थों का नियमित सेवन, आत्म-नियंत्रण, शांति और अच्छा स्वास्थ्य लंबे और स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक हैं। यह श्लोक स्वास्थ्य और दीर्घायु बनाए रखने में प्राणायाम (श्वास- अभ्यास) और आत्म-अनुशासन जैसी अभ्यासों के महत्व पर बल देता है।

6.3. प्रारंभिक बाल्यावस्था में योग और मन-शरीर एकीकरण: बच्चों के लिए आसन और प्राणायाम:

आसन (शारीरिक मुद्राएं) और प्राणायाम (श्वास तकनीक) से युक्त योग, शारीरिक और मानसिक विकास को एकीकृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आधुनिक शैक्षिक प्रथाएं बच्चों के शारीरिक लचीलेपन, एकाग्रता और भावनात्मक संतुलन को बढ़ाने के लिए इन तत्वों को सम्मिलित करती हैं।

"योगः कर्मसु कौशलम्।" (भगवद्गीता 2.50)

(योग कार्यों में निपुणता है।) यह श्लोक योग के सार को एक अभ्यास के रूप में दर्शाता है जो शारीरिक कौशल को मानसिक फोकस के साथ एकीकृत करता है, जो समग्र विकास को बढ़ावा देने के आधुनिक ईसीसीई लक्ष्यों के अनुरूप है।

"समत्वं योग उच्यते।" (भगवद्गीता 2.48)

(समत्व ही योग है।) यह श्लोक योग के माध्यम से संतुलन और सामंजस्य प्राप्त करने के महत्व को स्पष्ट करता है, जो प्रारंभिक बाल्यावस्था में भावनात्मक लचीलापन और स्थिरता विकसित करने में महत्वपूर्ण है।

आयुर्वेदिक सिद्धांतों और योग के अभ्यास के माध्यम से, बच्चों के स्वास्थ्य और शारीरिक विकास का समग्र रूप से पोषण किया जाता है। ये प्राचीन प्रथाएं आधुनिक ECCE दृष्टिकोणों में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं, जो बच्चों के व्यापक विकास के लिए संतुलित पोषण, शारीरिक गतिविधि और मानसिक कल्याण के महत्व पर बल देती हैं।

7. पारंपरिक से आधुनिक ECCE अभ्यासों तक का संक्रमण (Transition):

पारंपरिक से आधुनिक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) अभ्यासों में प्रवाह बच्चों की शिक्षा और विकास के दृष्टिकोण में एक गंभीर परिवर्तन का प्रतीक है।

7.1. ईसीसीई पर औपनिवेशिक शिक्षा का प्रभाव: पारंपरिक शिक्षा प्रणालियों का विघटन:

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के आगमन ने पारंपरिक भारतीय शिक्षा प्रणालियों को अधिकांशतः परिवर्तित कर दिया। एक पश्चिमी मॉडल की शुरुआत ने रटने, याद करने और मानकीकृत परीक्षण पर जोर दिया, जो भारतीय शिक्षा के अभिन्न अंग रहे समग्र, आध्यात्मिक और नैतिक आयामों से लोगों के ध्यान को हटा दिया। "विद्या विविधा सर्वसां विधास्यति कामश्रयम्, न हि नास्ति महानुभवान् विद्यायाः।" (मनुस्मृति 1.82) (ज्ञान सभी आकांक्षाओं का स्रोत है; वास्तव में ज्ञान से ही बड़ा, समझ का कोई बड़ा स्रोत नहीं है।), यह श्लोक पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों ने

आकांक्षाओं और समझ को आकार देने में जो गहराई से भूमिका निभाई थी, उसे सपष्ट करता है, जो कि औपनिवेशिक शिक्षा द्वारा आरोपित अल्पवादी दृष्टिकोण के विपरीत है।

7.2. स्वतंत्रता के बाद के सुधार और भारतीय ज्ञान प्रणालियों का पुनरुद्धार:

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 का उद्देश्य आधुनिक संरचना के अंदर पारंपरिक भारतीय शिक्षा का सार बहाल करना है। यह मातृभाषा-आधारित शिक्षा, स्थानीय ज्ञान और नैतिक शिक्षण अभ्यासों के एकीकरण पर बल देता है ताकि प्राचीन भारतीय प्रणालियों की विशेषता वाले समग्र दृष्टिकोण को पुनर्जीवित किया जा सके। "यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्-धरा, तत्र श्रीः विजयो भूतिर् ध्रुवा नीतिर् मतिर् ममा" (भगवद्गीता 18.78) जहाँ योग के स्वामी कृष्ण हैं और जहाँ अर्जुन, सर्वोच्च धनुर्धर हैं, वहाँ सफलता, विजय, समृद्धि और धर्म भी निश्चित है। यह श्लोक ज्ञान (योग) और नैतिक कर्तव्य (धर्म) के एकीकरण का प्रतीक है, जो एनईपी 2020 के लक्ष्य को दर्शाता है कि समग्र विकास प्राप्त करने के लिए पारंपरिक मूल्यों को आधुनिक शैक्षिक अभ्यासों के साथ सम्मिलित किया जाए। "अथा, ये धीराः परिजानन्ति विश्वानि भूतानि, स्थूलाणि श्लोकं समाश्रितानि।" (ऋग्वेद 10.191.3) जो बुद्धिमान और समझदार हैं और जो सभी प्राणियों के कल्याण की खोज करते हैं, वे ही हैं जो वास्तव में ज्ञान का सार समझते हैं। यह श्लोक ज्ञान और समग्र समझ के महत्व को रेखांकित करता है, जो एनईपी 2020 का लक्ष्य है कि पारंपरिक मूल्यों और स्थानीय ज्ञान को सम्मिलित करके आधुनिक ईसीसीई में उसको पुनः प्रस्तुत किया जाए। एनईपी 2020 के माध्यम से, प्राचीन भारतीय शैक्षिक सिद्धांतों को समकालीन अभ्यासों में एकीकृत करने पर बल है। यह पुनरुद्धार शिक्षा के आध्यात्मिक, नैतिक और समग्र आयामों को आधुनिक शैक्षणिक दृष्टिकोणों के साथ संयोजन का प्रयास करता है, जिसका उद्देश्य बालकों के लिए एक अधिक व्यापक और संतुलित शैक्षिक अनुभव को बढ़ावा देना है।

निष्कर्ष:

भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आइकेएस) में प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) का विकास आधुनिक शिक्षा के साथ पारंपरिक अभ्यासों को एकीकृत करने में मूल्यवान् अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। ऐतिहासिक रूप से, वैदिक काल से जैन और बौद्ध धर्म तक, भारतीय शिक्षा ने समग्र विकास पर ध्यान केंद्रित किया है, बच्चे के शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं का पोषण करना ईष्ट रहा है। इस दृष्टिकोण ने सुनिश्चित किया कि शिक्षार्थी ज्ञानी, पुण्यवान और दयालु व्यक्ति बने।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 एक ऐसी संरचना प्रदान करती है, जो इस समृद्ध विरासत को पुनर्जीवित करते हुए समकालीन वैश्विक शैक्षणिक मानकों को सम्मिलित करती है। अतीत के ज्ञान को आधुनिक प्रथाओं के साथ मिलाकर, एनईपी का लक्ष्य एक ईसीसीई प्रणाली बनाना है जो बच्चों को कल के लिए वैश्विक नागरिक के रूप में तैयार करती है।

पारंपरिक भारतीय शिक्षाएं आधुनिक शिक्षा का मार्गदर्शन करती हैं। भगवद्गीता-ज्ञान और समानता को बढ़ावा देती है, जबकि तैत्तिरीय उपनिषद् सत्यवादिता और आजीवन सीखने पर बल देती है। मनुस्मृति शिक्षा के लिए नीतिगत आचरण पर बल देती है और चरक संहिता शारीरिक स्वास्थ्य के महत्व पर प्रकाश डालती है। इन सिद्धांतों को एकीकृत करके, एनईपी 2020 का लक्ष्य अच्छी तरह से विकसित व्यक्तित्वों की पोषणीय व्यवस्था का निर्माण करना है, जो बौद्धिक, नैतिक और शारीरिक विकास को बढ़ावा देते हैं। यह संतुलित दृष्टिकोण भारत की शैक्षिक विरासत का सम्मान करता है और बच्चों को ज्ञान और करुणा के साथ आधुनिक चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करता है।

संदर्भ:

- अहीर, डी. (2008). प्राचीन भारत में शिक्षा. नई दिल्ली: एस. चंद एंड कंपनी लिमिटेड।
- बंडुरा, ए. (1977). सामाजिक अधिगम सिद्धांत. एंगलवुड क्लिफ्स, एनजे: प्रेंटिस-हॉल।
- ड्यूई, जे. (1938). अनुभव और शिक्षा. न्यूयॉर्क: मैकमिलन।
- गार्डनर, एच. (1983). फ्रेम्स ऑफ माइंड: द थ्योरी ऑफ मल्टीपल इंटेलिजेंस. न्यूयॉर्क: बेसिक बुक्स।
- हार्टजेल, जे. (2017). संस्कृत पाठ के बच्चों के संज्ञानात्मक कार्यों पर प्रभाव. जर्नल ऑफ कॉग्निटिव एन्हांसमेंट, 1(2), 98-108.
- कोलब, डी. ए. (1984). प्रायोगिक अधिगम: सीखने और विकास का स्रोत अनुभव. एंगलवुड क्लिफ्स, एनजे: प्रेंटिस-हॉल।
- मोंटेसरी, एम. (1967). मोंटेसरी विधि. न्यूयॉर्क: शोकन बुक्स।
- पाठक, वी. के. (2022). संस्कृतशिक्षणपथेयम्. राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, दिल्ली।
- सलूजा, सी. के. (2024). शिक्षा: भारतीय दृष्टिकोण. दिल्ली: संस्कृत प्रमोशन फाउंडेशन।
- सरस्वती, जी. (2015). संज्ञानात्मक विकास में संस्कृत की भूमिका: एक समीक्षा. अंतर्राष्ट्रीय भाषा और भाषाविज्ञान पत्रिका, 2(3), 120-134.

वेबसाइट्स और ऑनलाइन संसाधन:

चरक संहिता: एक प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रंथ. <http://www.ayurveda-international.org>

सुश्रुत संहिता: एक प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रंथ. <http://www.ayurveda-international.org>

उपनिषद: एक नया अनुवाद. <https://www.upanishads.org>

American Institute of Vedic Studies : संस्कृत और संज्ञानात्मक कार्य. <http://www.vedicstudies.org>

Indian Council of Philosophical Research. (2020)। भारतीय शिक्षा के दार्शनिक आधार. <http://www.icpr.in>

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. (2020)। शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf

Vedic Research Institute. (2018)। वैदिक काल में शिक्षा. <http://www.vedicresearch.org>